International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 232-234

बौद्ध धर्म का समकालीन समाज पर प्रभाव : एक नूतन विमर्श

धीरेन्द्र सिंह
शोध छात्र, प्राचीन इतिहास संस्कृति, एवं पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

समय–समय पर भारत में अनेक धर्म पंथ पल्लवित एवं पुष्पित हुए हैं, जिनमें वैदिक, हिन्दू, जैन, बौद्ध, ईसाई, इस्लाम, पारसी, सिख कबीर पंथ आदि महत्वपूर्ण धर्मों का आज भी विशेष प्रभाव है, किन्तु विवेच्यकाल में इनमें से कई धर्म पंथों का प्रादुर्भाव नहीं हो पाया था। प्रायः सभी विद्वान इस बात से सहमत है कि सिन्धु–घाटी सभ्यता वैदिक काल से भी प्राचीन है। सिन्धु घाटी के अवशेषों में लिखित साक्ष्य का अभाव है और जो प्राप्त भी हुआ है अभी तक पढ़ा नहीं जा सका है, किन्तु उत्खनन से प्राप्त अवशेषों के आधार पर विद्वानों ने प्रचलित धर्म की रूप–रेखा प्रस्तुत किये हैं। इन्हें मुख्य रूप से सात या आंठ प्रस्तुत शोध–प्रबंध में ''बौद्ध धर्म का भारतीय समाज पर प्रभाव (छठी शताब्दी ईसा पूर्व से छः सौ ई0 तक)'' को दर्शानें का प्रयास किया गया है। यह सर्वविदित है कि भारत में धर्म की सर्वोपरि मान्यता रही है, किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि धर्म ने समाज और राजनीति को किसी सीमा से अधिक प्रभावित किया। यद्यपि भारत में धर्मशस्त्र और राजशास्त्र एवं समाजशास्त्र को अलग–अलग समझा जाता है, तथापि राजशास्त्र व समाजशास्–धर्मशास्त्र से अक्षुण नहीं रह सका, न तो धर्मशास्त्र के बिना उसका अस्तित्व ही सम्भव था। वास्तव में धर्म शास्त्र और राजशास्त्र दोनों ही व्यावहारिक स्तर पर समाज को कर्तव्य का उपदेश देते है, अन्तर केवल दोनों की क्षमताओं का है। धर्मशास्त्र जहां समाज को सद्जीवन का उपदेश दे सकता है, वहां दण्ड शास्त्र उद्देश्यों को पालन करने का आदेश देता है और पालन भी कराता है1 इसलिये ''मुनस्मृति'' में दण्डनीति को धर्म का जमींदार (प्रतिभूत) कहा गया है।

ईसा पूर्व छठी शताब्दी में धार्मिक आन्दोलन का प्रबलतम रूप हम बौद्ध धर्म की शिक्षाओं तथा सिद्धान्तों में पाते है बौद्ध धर्म की स्थापना महत्मा बुद्ध ने की। ज्ञान की खोज में वे इधर उधर भटकते हुए गया में उरुवेला नामक स्थान पर पीपल वृक्ष के नीचे समाधिस्थ अवस्था में ज्ञान प्राप्त किया। ज्ञान प्राप्त के बाद महत्मा बुद्ध सारनाथ आये और यहां पर अपना प्रथम उपदेश दिये जिन्हें चार आर्य सत्य के नाम से जाना जाता है। यह घटना बौद्ध धर्म में धर्मचक्र प्रवर्तन के नाम से जानी जाती है, बौद्ध धर्म की शिक्षाओं से प्रभावित हो कर सम्राट अशोक व कनिष्क ने इसे राजकीय धर्म बनाया तथा इसके प्रचार प्रसार के लिए बहुत से लोकोपकारी कार्य किए। महापरिनिर्वाण के बाद बुद्ध के अस्थि अवशेषों को आठ भागों में विभाजित किया गया, मगध के शासक अजातशत्रु तथा इस क्षेत्र के गणराज्यों ने स्तूप निर्मित कर इसे सुरक्षित रखा। बौद्ध धर्म के विषय में हमें विशद ज्ञान पालि–त्रपिटक से प्राप्त होता है, महात्मा बुद्ध के अनुसार जीवन में दुःख है, इस दुःख से मुक्ति प्राप्त करने के लिए उन्होंने अष्टांगिक मार्ग का पालन करना बताया।

बौद्ध धर्म के स्वरूप की व्याख्या से पूर्व संक्षिप्त यह कहा जा सकता है कि विभिन्न सम्प्रदायों में जो व्यापक और समान तत्व है उनको बुद्ध का मूल उपदेश मानना चाहिए। रोजेनवर्ग ने भी इस सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त किया है कि एक ही मूल और अखण्डित तत्व का नाना सम्प्रदायों में विकास हुआ है। कोई भी सिद्धान्त जो कि चिर काल से अनुवर्तमान हो अपरिवर्तित नहीं रहता और इतिहास यदि परवर्ती सिद्धान्तों से मूल सिद्धान्त की अनुगति प्रतीत हो तो भी यह उसका मूल रूप न होकर उसकी एक विकसित तथा रूपान्तरिक अभिव्यक्ति होगी। वास्तव में परवर्ती सिद्धानें पर दृष्टिपात करने से उसका मूल रूप विश्वास तौर से नहीं जाना जा सकता। इसके लिये प्राचीन आरै मूल वाङ्मय को ही प्राथमिक माना जा सकता है परन्तु यह भी उतना ही सत्य है कि इन प्राचीन सिद्धान्तों के सम्यक बोध में इनके परिणीत रूप और परवर्ती इतिहास का ज्ञान विशेष सहायता प्रदान कर सकता है।

इस प्रकार बौद्ध धर्म में यह मान लिया गया है कि सभी सांसरिक पदार्थ संस्कृत है, और निर्वाण बुद्ध तथा आकाश असंस्कृत है। अतः यदि यह ज्ञात हो जाये कि सांसारिक निस्सारता क्या है तो उसे असंस्कृत सत्य का साक्षात्कार ठीक उसी प्रकार हो जाता है जैसे चक्षु और आकाश के बीच के दृष्टिबाधक के हटने पर आकाश का दर्शन होता है1। इससे यह ज्ञात होता है कि अविद्या ही दुःख क मूल कारण है, क्योंकि अविद्याग्रस्त चित्त के लिये दुखात्मक संसार चक्र निरन्तर कर्म, तृष्णा आदि का सहारा लिये चलता रहता है।

बौद्ध धर्म में जीवन का परम उद्येश्य यथा– निर्वाण का द्वार स्त्री, पुरुष, युवा, वृद्ध, ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैष्य, शूद्र, आर्य, अनार्य, देशी, विदेशी आदि सभी के लिए खुला था। ''जाति मत पूछो'' आचरण का धम्मघोष समस्त मानव के लिए था।

महात्मा बुद्ध द्वारा प्रतिपादित बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों को प्रमुखतः दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। पहला बौद्ध धर्म के दार्षनिक सिद्धान्त दूसरा बौद्ध धर्म के व्यवहारिक सिद्धान्त। महत्मा बुद्ध ने अपने धार्मिक सिद्धान्तों मे किसी भी दार्शनिक तत्व की विवेचना या प्रतिपादन नहीं किया। तथागत का विस्वास का था कि सृष्टि के निर्वाण तथा आत्मा एवं परमात्मा आदि से मनोत्कर्ष का कोई सम्बन्ध नहीं है महात्मा बुद्ध ने कभी यह भी दावा नहीं किया कि वे किसी धर्म का प्रतिपादन कर रहे है। उनका कहना था कि मै पुरातन काल से चले आ रहे धर्म की स्थापना मात्र कर रहा हूँ। यह सब होते हुए भी बौद्ध धर्म के आधार स्वरुप जिन तत्वों का प्रतिपादन किया गया उनमें निहित विचारों द्वारा हमें अनेक दार्शनिक सिद्धान्तों का परिचय मिलता है। यह सर्वमान्य सत्य है कि किसी भी विचार अथवा मत का कोई दार्शनिक आधार अवश्य ही होता है, नैतिकता कर्म प्रधान तथा निर्वाण के तत्व से परिपूर्ण महत्मा बुद्ध के दार्शनिक सिद्धान्तों की प्राप्ति होती है।

श्री बर्नोफ महोदय ने बौद्ध धर्म के इस दार्शनिक सिद्धान्त की चर्चा करते हुए लिखा है कि "Nirvana is nothing but the self lessness in the metaphysical sense of the word relapse in to that being which is nothing in itself"

इनके धर्मिक सिद्धान्तों में परोक्ष रुप से जिस उपरोक्त दार्शनिक सिद्धान्तों की प्राप्ति होती है वे निश्चय ही अति व्यवहारिक एवं विचारणीय है। तथागत ने जो कुछ भी कहा उसका आधार निश्चित ही एक दार्शनिक सिद्धान्त के प्रति आस्था के प्रमाण प्रकट करते है। बौद्ध धर्म जीवित जीवन में विश्वास रखता है अतः अपने प्रत्येक अर्थ में इसका दृष्टिकोण पूर्णतया व्यवहारिक है, महत्मा बुद्ध की मान्यता थी कि ''धर्म जीवन का विषय है मृत्यु का नही'' फलतः उन्होंने जिस धर्म का प्रचार किया उसकें व्यवहारिकता पर विशेष बल दिया गया। बौद्ध धर्म का उदय छठी शताब्दी ईसा पूर्व में हुआ था उससे इस धर्म ने तत्कालीन समाज में व्याप्त समस्त कुरीतियों की आलोचना की और तर्क पर आधारित धर्म को मानने पर जोर दिया।

भारत को अपनी पुरा सांस्कृतिक सम्पदा के संरक्षण के लिए इस बढ़ रही द्वेष प्रवृत्ति को रोककर सौहार्द्र प्रवृत्ति को बढ़ावा देना चाहिए, ताकि ''सभी सम्प्रदायों के लोग सभी जगह मैत्री भाव के साथ रहें और अपने–अपने मंगलकारी सिद्धान्तों का प्रचार–प्रसार करें, क्योंकि सभी शान्ति चाहते हैं।''

कर्म सिद्धान्त

बौद्ध धर्म में भविष्य कर्म की विरासत माना गया है, परन्तु ब्राम्हण मतों के विरूद्ध बौद्ध दर्शन में नित्य आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया गया है। बौद्ध दर्शन में कर्म का सिद्धान्त क्षणिकवाद तथा कारण परम्परा से सम्बद्ध है। अतः वे यह स्वीकार नहीं करते हैं कि जो कर्म करता है वही उसका फल भोगता है। क्योंकि जिस व्यक्ति ने कर्म किया वह तो वस्तुतः फल भोगने तक रह ही नहीं गया। यद्यपि परिवर्तन सर्वथा भिन्न भी नहीं माना गया है इसलिये कि संसार के समस्त जीव एक निरन्तर प्रवाह (प्रतिक्षण परिवर्तन) की स्थिति में है। यद्यपि परिवर्तन सर्वथा भिन्न भी नहीं माना गया है, बल्कि परिवर्तन में कर्म का कारण गुण संक्रमित हो जाता है। इस सम्बद्ध में बौद्ध निकायों में कहा गया है कि कर्म ही अपना है, वही विरासत है, प्रभाव है बन्धु–सखा और सहारा है, कर्म ही जीवों को हीन और उत्तमता में विभक्त करता है।

अतः कर्म एवं उसके फल की महत्ता को बुद्ध ने अपने नीवन दर्शन से ओत–पोत किया और यह बताया कि कर्म एवं फल तथा कर्म से पुनर्जन्म होता है। अतः पाप कर्मों को छोड़कर पुण्य का संचय करना चाहिए। सत्य ज्ञान से चित्त को शुद्ध कराना चाहिए। इसलिये सदा कुशल कर्म को करना चाहिए।

बौद्ध दर्शन से कर्म सिद्धान्त की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि संसार के समस्त जीव निरन्तर प्रवाहमान है। अतः एक क्षण की स्थिति समाप्त होनें पर ही दूसरे क्षण प्राप्त हो सकती है। इससे यह भी स्वयं सिद्ध हो जाता है कि जो कर्म करता है वही उसका फल भेगता है, अर्थात क्षणिवाद सिद्ध हो जाता है। इसकी सिद्धि के लिये अनेक उदाहरण दिये गये हैं– यथा बीज के नष्ट होनें पर अंकुर या वृक्ष उत्पन्न होता है किन्तु वृक्ष वही बीज नहीं रहा जाता है। दूसरे शब्दों में भूमि, जल, वायु, गर्मी इत्यादि के कारण जब परिवर्तन हो जाता है तब वह बीज नहीं रह जाता है।

बौद्ध दर्शन की दूसरी विशेषता है कि हर क्षण परिवर्तन के सासथ ही परिवर्तित जन्म किये गये कुशल, अकुशल कर्मों के फल को स्वीकार किया गया है। अर्थात् वह बीज जो अंकुरित हो गया उसमें बीज का गुण संक्रमित हो जाता है।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कम से कम बौद्ध भिक्षु, बौद्ध धर्म के प्रमुख प्रचारक एवं धर्म प्रधान स्वयं अपने घर में मांसाहार के लिये जीव हिंसा नहीं करते होंगे। इस तरह अप्रृत्यक्ष मांसाहार पर रोक लग गयी होगी नहीं तो कम तो अवश्य हो गयी होगी। यह जीव हिंसा पर रोक अशोक द्वारा बौद्ध धर्म स्वीकार करने के बाद लगायी गयी थी। अतः कहा जा सकता है कि बौद्ध धर्म में मनुष्य की भोजन सम्बन्धी आदतों को प्रभावित किया और जहां तक हो सका मांसाहार को कम किया।

भारत की सांस्कृतिक संरचना एवं भारतीय संस्कृति की समृद्धि में बौद्ध धर्म का योगदान नितान्त महत्वपूर्ण है। जहां एक ओर बौद्ध धर्म ने समाज के विभिन्न वर्गों को सामाजिक एकता के सूत्र में आबद्ध करने का प्रयास किया वहीं दूसरी ओर सदियों से उपेक्षित विपन्न एवं अति पिछड़े वर्गों का मार्गदर्शन कर उन्हें जीवन के चरम लक्ष्य निर्वाण की प्राप्ति के लिए भी प्रेरित किया। बौद्ध धर्म ने जीवन मूल्यों के अन्तर्गत जीव हिंसा पर रोक अर्थात अहिंसा के महत्व को प्रतिपादित कर न केवल प्राचीन भारतीय संस्कृति को समृद्ध बनाया अपितु भावी पीढ़ी के लिए एक आदर्श एवं व्यवस्थित जीवन शैली की आधार शिला भी रखा। पशु–पक्षियों के बध को अनुचित बताना, पालतू व जंगली पशुओं के संरक्षण पर बल देना तथा पशु बलि को धर्मिक कृत्य से अलग रखना पर्यावरण संरक्षण की दिशा में निस्संदेह उपयोगी सिद्ध हुए। बौद्ध चिन्तन में वृक्षों की उपादेयता इस तथ्य से प्रमाणित है कि महात्मा बुद्ध को वृक्ष के नीचे ही ज्ञान प्राप्त हुआ था। वस्तुतः बोधि वृक्ष बौद्ध चिन्तन धारा में आस्था के केन्द्र के रूप में अवस्थित है। नारी सशक्तीकरण की दिशा में भी बौद्ध धर्म का अप्रतिम योगदान रहा है। वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में मानवाधिकार की अवधारणा कों सम्प्रति अवश्य बल मिला है, परन्तु बौद्ध धर्म में इसका पूर्व रूप विद्यमान है। दया, करूणा, उदारता, सहानुभूति, वृद्धों की सेवा, बड़ों का आदर, ब्राह्मण–श्रमणों का सम्मान, शील एवं अष्टांगिक मार्ग आदि व्यक्तिगत एवं सामाजिक मूल्यों के प्रतीक हैं। भारतीय संस्कृति के प्रचार–प्रसार में बौद्ध धर्म का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारतीय कला, दर्शन, धर्म आदि युग–युग तक उनकी शिक्षाओं से प्रभावित होते रहे हैं।

बौद्ध धर्म भारत का ही नही अपितु विश्व के मान्य धर्मों में से एक है। बौद्ध धर्म अन्य धर्मों की तरह मात्र एक धर्म नही था, यह एक ऐसे व्यापक आन्दोलन का परिणाम था, जो व्यक्तिगत विश्वासों से लेकर सामाजिक मान्यताओं तक जीवन के अनेक पहलुओं को बदल रहा था और जिसकी स्पष्ट झलक तत्कालीन चिन्तन और जीवन में स्पष्ट थी। इस धर्म ने एक जीवन पद्धति का विकास किया जिसकी नींव मनुष्य के व्यक्तिगत विचार पर पड़ी, इसमें अहिंसा, करूणा, त्याग, और विश्वबन्धुत्व के उदात्त सिद्धान्त थे। बौद्ध धर्म आज भी प्रासंगिक है। बुद्ध का जीवन, कार्य और चिन्तन, पीड़ित मानवता के लिये अतिशय प्रेरक है। विश्व के अनेक देशों में आज भी बौद्ध धर्म एक जीवित धर्म के रूप में दिखाई पड़ता है। चीन, कोरिया, तिब्बत, मंगोलिया, विएतनाम, वर्मा, थाईलैण्ड, कम्पूचिया, जापान, आदि देश आज भी बौद्ध धर्म से अनुप्राणित हैं।

जहां तक बौद्ध युग के सामाजिक जीवन का प्रश्न है पालि पिटक, जैन आगम तथा तत्कालीन धर्मशास्त्र में उपलब्ध प्रमाणों से विदित होता है कि समाज में सुरापान का व्यापक प्रचार था। जातकों में उल्लिखित है कि मधुशाला में घड़ों में भर–भर कर सुरा रखी जाती थी और वहां पीने वालों की भीड़ लगी रहती थी। सुरापान करने वालों में न केवल साधारण लोग थे अपितु करोड़पति श्रेणियों के भी उदाहरण उपलब्ध होते हैं। यहां तक कि मधुशाला में सुरापान के लिये पति–पत्नी के साथ जाया करते थे। इसके अतिरिक्त मधुशाला के स्वामी प्रायः धनी श्रेष्ठि होते थे जिनकी समाज में बड़ी प्रतिष्ठा थी।

बौद्ध धर्म में अविद्या को मिथ्या दृष्टि कहकर समस्त दुःखों का मूल कहा गया है और उसके अन्त को या चित्त की वृत्तियों का समूल

नाश को समाधि कहा गया है। ठीक इसी प्रकार योग दर्शन में भी अविद्या को ही समस्त दुःखों का मूल कारण स्वीकार किया गया है। बौद्ध दर्शन में ध्यान के पांच भेद बतायें गये है तो योग दर्शन में भी पंचविधि समाधि की चर्चा की गयी है।

स्मृति को बौद्ध धर्म में आलम्बन के प्रति दृढ़ता का प्रतीक माना गया है साथ ही यह भी स्वीकार किया गया है कि यह आस्था के प्रति इन्द्रकील के समान दृढ़ बना देता है। इसको पतंजलि ने चित्त की वृत्तियों में अन्यतम माना गया है। वे अनुभूत विषयों का असम्प्रमोष (यानि ठीक उसी रूप में उनकी उपस्थिति) के रूप में स्मृति को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि स्मृति एक ओर चित्त की वृत्ति है तो वही योगी के चित्त में उपस्थित होकर आलम्बन होते हुए भी अनाकुल रखकर समाधि की ओर अग्रसर करती है। इस प्रकार स्पष्ट ज्ञात होता है कि पतंजलि योग सूत्र पर बौद्ध धर्म का प्रभाव है।

इस प्रकार बौद्ध धर्म के अष्टांगिक मार्ग का अनुसरण करते हुए योग के ऑठ अंग अंग स्वीकार किया है यथाः बौद्ध धर्म में हिंसा सत्य, अस्तेय, ब्रहाचर्य एवं मयपान अर्थात अपरिग्रह को निर्वाण का अत्यन्त विरोधी मानते हुए इनकें त्याग करने वालों को निर्वाण मार्ग का पथिक कहा गया है। साथ ही धर्म संयम, दम और शौच के साथ अहिंसा एवं सत्य का पालन भिक्षु के लिये अति आवश्यक बताया गया है। इसे ही योग दर्शन का उपर्युक्त संयम को यम कहते हुए इन्हें योग का प्रथम अंग स्वीकार किया गया है।

अहिंसा आदि यमों के पालन पर बल देते हुए हिंसा के त्याग को प्रथम शिक्षा पद कहा गया है, और अपने समान ही प्राणियों को समझते हुए हिंसा के निषेध का निर्देश दिया गया है। इसी प्रकार असत्य भाषण को बौद्ध धर्म में पराजिक धर्म मानते हुए सत्य को पंचशीलों में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। धम्मपद में भी असत्य को सभी पापों का मूल बताया गया है। सम्भवतः हिंसा और असत्य के इस प्रकार निषेध के कारण योगसूत्र भाष्यकर व्यास ने भी सत्य आदि को अहिंसा सापेक्ष्य स्वीकारते हुए सत्य की अपेक्षा अहिंसा पर अधिक बल दिया है।

सन्दर्भ

1. पद्मपुराणांतर्गत, पुरुषोत्तममास माहात्म्य, टीकाकार विद्यावारिधि पं0 ज्वाला प्रसाद मिश्र, खेमराज, श्री कृष्णदास प्रकाशन बम्बई पृष्ठ संख्या–113.
2. दैनिक समाचार–पत्र ''दैनिक जागरण'' फर्रुखाबाद संस्करण, दिनाकं– 18/03/2012, पृष्ठ संख्या–9.
3. पाण्डेय विमल चन्द्र :प्राचीन भारत का राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, शारदा पब्लिकेशन इलाहाबाद।
4. मुखर्जी राधा कुमुद : प्राचीन भारत
5. श्रीवास्तव कृष्ण चन्द्र : प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, युनाइटेड पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
6. पाण्डेय, जे0 एन0 : पुरातत्व विमर्श, प्राच्य विद्या संस्थान,2012 पृष्ठ सं0 429–436।
7. पाण्डेय, जे0 एन0 : पुरातत्व विमर्श, प्राच्य विद्या संस्थान,2012 पृष्ठ सं0 269–272।
8. अरणविभंग सुत्त, मज्झिमनिकाय, 3/4/9।
9. धम्मचक्कापबत्तन सुत्त, संयुक्तनिकाय।
10. धम्मपद्, गाथा 273–275।
11. ऋग्वेद 2/24/20।
12. अग्ने यं यज्ञमध्वरं विष्वतः परिभूरसि। स इद्देवेषु गच्छति। एवं ऋग्वेद 1/1/4।
13. प्लवा ह्योते अदृढ़ा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमवरं येषु कर्म। एतच्छ्रयो येअभिनन्दन्तिमूढ़ा जरामृत्युं ते पुनरेवापि यन्ति। एवं मुण्डकोपनिषद 1/2/7।
14. सुरा मत्स्याः पषोर्मांसं द्विजातीनां बलिस्तथा। धूर्तैः प्रवर्तितं यज्ञे नैतद्वेदेषु विद्यते।– महाभारत 2/5/78।
15. वज्ज च वज्जतो ञत्वा अवज्जं च अवज्जतो। सम्मादिष्ठिसमादाना सत्ता गच्छन्ति सुग्गति। एवं धम्मपद गाथा–319।
16. सीलददस्सन सम्पन्नं धम्मट्ठं सच्चवादिनं। अत्तनो कम्म कुब्बानं तं जनो कुरुते पियं।– वही–217।।
17. हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं सुखम्।
18. शर्मा, बी. सी., 1993, मिट्टी एक–रूप अनेक, (प्रथम संस्करण), सी.एस.आई.आर., प्रकाशन एवं सूचना निदेशालय, नई दिल्ली, पृ. 27
19. शर्मा, बी. सी., 1993, मिट्टी एक–रूप अनेक, (प्रथम संस्करण), सी.एस.आई.आर., प्रकाशन एवं सूचना निदेशालय, नई दिल्ली, पृ. 19
20. श्रीकृष्ण, मनमोहन सरल, 1959, मिट्टी का काम, (प्रथम संस्करण), आत्मा राम एण्ड सन्स, दिल्ली, पृ. 8–9
21. द्रष्टव्य – ''वियोगी'' गंगा पंडित, 1983, प्रजापति गौरव ग्रन्थ और प्रमाणिक इतिहास, श्री गोपालकृष्ण, प्रिंटिंग वर्क्स, मुंगेर, पृ.34